# जल उत्पादकता में वृद्धि से जल संकट का समाधानः राजस्थान राज्य विशिष्ट

**राजेश कुमार गोयल, महेश कुमार गौड़ एवं रंजय कुमार सिंह**

केन्द्रीय शुष्क क्षेत्र अनुसंधान संस्थान, जोधपुर
ई–मेलः rkgoyal24@gmail.com

## सारांश

जल मानव जीवन का महत्वपूर्ण घटक है परन्तु इसकी उपलब्धता व वितरण सर्वत्र समान नहीं है। बढ़ती आबादी, कृषि योग्य भूमि पर आश्रितों की संख्या में वृद्धि, प्राकृतिक जल संसाधनों का अत्यधिक दोहन व निरन्तर गिरते भू–जल स्तर के कारण जल की समस्या और अधिक गम्भीर हो रही है। कम तथा अनियमित वर्षा एवं इसका असमान वितरण होने के कारण वर्षा के मौसम में भी प्रायः फसलों को ऋतु के मध्य में सूखे का सामना करना पडता है जिससे फसलों के उत्पादन पर विपरीत असर पड़ता है। मौसम की अनिश्चितता के कारण खेती बहुत जोखिम भरी होती है। किसान खेती के लिए पूरी तरह से सतही व भूजल पर निर्भर हैं और सतहीव भूजल उपलब्धता दिन पर दिन कम होती जा रही है। जल संकट के कारण किसान दिन पर दिन खेती से दूर होते जा रहे हैं फलस्वरूप उत्पादकता में बहुत कमी आ रही है जिसका मुख्य कारण जल संकट है। जल की उत्पादकता में वृद्धि के द्वारा ही जल संकट का सामना किया जा सकता है। केंद्रीय शुष्क क्षेत्र अनुसंधान संस्थान के द्वारा विकसित तकनीकें जैसेसमतलीकरण एवं मेड़बन्दी, समोच्च खेती, समोच्च वानस्पतिक अवरोध, सतही पलवार, नाडी, टांका, परिस्त्रवण टैंक, चैक डैम/नाला बंड, गैबियन द्वारा वर्षा जल पुरर्भरण, पुनर्भरण कुँओं द्वारा वर्षा जल का भूमिजल में पुनर्भरण, खडीन, फव्वारा एवं बूंद बूंद सिंचाई को अपनाकर जल की उत्पादकता में वृद्धि की जा सकती है व् जल सकंट का सामना किया जा सकता है। प्रस्तुत लेख में जल उत्पादकता में वृद्धि की इन सभी तकनीकों का विस्तार से वर्णन किया है।

## Abstract

Water is an important component of human life but its availability and distribution is not the same everywhere. The problem of water is becoming acute due to teeming population, intensification in the number of dependents on arable land, disproportionate exploitation of natural water resources and constantly falling ground water level. The crops often face drought in the middle of the season due to low and erratic rainfall and its uneven distribution which ultimately cause adverse impact on the crop production. Farming is very risky due to weather uncertainty. Farmers are completely dependent on surface and ground water for farming and the availability of surface and ground water is decreasing day-by-day. Due to water crisis, farmers are gradually getting away from farming, due to which there is a lot of decrease in productivity. Water crisis can be dealt with only by increasing the productivity of water.Techniques developed by Central Arid Zone Research Institute such as levelling and bunding, contour cultivation, contour vegetative barrier, surface mulching, *nadi*, *tanka*, percolation tank, check dam/*nala* (drain) bund, rainwater recharge by gabion, groundwater recharge by recharge wells, *khadin*, sprinkler and drip irrigation, etc. can be adopted to increase water productivity and effectively mitigate water crisis. In the present paper, a detailed account of all these techniques has been presented for increasing water productivity.

## प्रस्तावना

राजस्थान देश का सबसे बड़ा राज्य है। राज्य का भौगोलिक क्षेत्रफल 342.65 लाख हेक्टेयर है जो कि देश के कुल भौगोलिक क्षेत्रफल का 10.4% है। राज्य में आवश्यक जल की उपलब्धता में भूजल का महत्वपूर्ण योगदान है। प्रदेश में सिंचाई की लगभग 70% एवं पीने के पानी की लगभग 90% आवश्यकता भूजल से ही पूरी होती है। परन्तु राजस्थान राज्य के पश्चिमी भू–भाग में ज्यादातर स्थानों पर भूजल खारा व भूजल स्तर काफी गहराई पर है जिसके कारण इसका सिंचाई एवं पीने के लिए उपयोग सीमित है। भूजल के लगातार बढते दोहन के कारण भूजल स्तर में तेजी से गिरावट आ रही है। अतः भूजल पुनर्भरण जल संरक्षण के लिए अति आवश्यक है। राज्य के पश्चिमी भाग में भूजल पुनर्भरण की दर काफी कम है। इसका मुख्य कारण वर्षा का कम होना, सतही जल श्रोतों का न होना तथा अत्यधिक वाष्पोत्सर्जन होना है।

अतः राजस्थान में वर्षा जल को अधिक से अधिक मात्रा में संग्रहित करना अति आवश्यक हो गया है जिससे सतही जल की उपलब्धता बढ़ने के साथ–साथ भूजल स्तर भी बढ़ सके। ऐसी स्थिति में जल की उत्पादकता में वृद्धि के द्वारा ही जल संकट का सामना किया जा सकता है वर्षा जल संरक्षण के लिए कई विधियाँ हैं, जिनके बारे में आगे विस्तार से वर्णन किया गया है।

## समतलीकरण एवं मेड़बन्दी

उबड़–खाबड़ भूमि पर वर्षा जल का वितरण कहीं आवश्यकता से अधिक तो कहीं पर आवश्यकता से बहुत कम होता है। ये दोनों ही स्थितियां फसल उत्पादन के लिये बहुत प्रतिकूल है। खेत के समतलीकरण द्वारा वर्षाजल वितरण की इस असमानता को दूर किया जा सकता है। समतल सतह से जल का बहाव कम होने के कारण वर्षाजल भूमि में अधिक मात्रा में रिसता है व नमी गहराई तक बनी रहती है। खेतों में पानी को रोकने के लिए खेत को समतल करके मेड़बन्दी करना सबसे सरल उपाय है। खेतों को इस तरह तैयार रखा जाता है कि ज्यादा से ज्यादा वर्षा जल भूमि में अवशोषित हो जाए तथा फसलों के काम आये। खेत को समतल कर चारों ओर न्यूनतम 0.5–0.6 मीटर ऊँची मेड़ बनाकर वर्षा जल को बाहर जाने से रोका जा सकता है। मेड़बन्दी का मुख्य उद्देश्य खेत का पानी खेत में रहना चाहिये। वर्षा ऋतु में अतिरिक्त जल को खेत में ही कुंड बनाकर भी एकत्रित किया जा सकता है। इस तरह एकत्रित किया गया जल वर्षा के बीच यदि लंबा अंतराल हो जाए तो सिंचाई के काम में लाया जा सकता है।

## समोच्च खेती

समोच्च खेती अर्द्धशुष्क व शुष्क क्षेत्रों में मिट्टी और वर्षा आधारित खेती के लिए जल संरक्षण के लिए एक भूमि उपचार तकनीक है। परम्परागत विधि में प्रायः खेती ढाल के समानान्तर ऊपर से नीचे की जाती है व यह तरीका मृदा व जल क्षरण का एक मुख्य कारण है। यदि समस्त कृषि कार्य एवं बोआई–रोपाई ढाल के अभिलम्ब दिशा में समोच्च रेखा पर किया जाये तो मृदा व जल क्षरण को काफी हद तक कम या रोका जा सकता है। इस विधि में जुताई करते समय ढाल के विपरीत दिशा में सूक्ष्म अवरोधों का निर्माण होता है जो मृदा व जल क्षरण को रोकने में सहायक होता है। मृदा व जल संरक्षण के अतिरिक्त समोच्च खेती मृदा की उर्वरता का भी संरक्षण करती है जिससे फसलों की उपज में वृद्धि होती है।

## समोच्च वानस्पतिक अवरोध

स्थानीय घास का समोच्च वानस्पतिक अवरोध जल संरक्षण और भूमि की उत्पादकता में सुधार करने के लिए के लिए एक सरल उपाय है। जिन बड़े खेतों में अधिक ढलान के कारण समतलीकरण संभव नहीं होता है वहां ढलान के अभिलम्ब दिशा में मिट्टी के समोच्च अवरोध बनाकर वर्षा जल के बहाव को रोका जा सकता है। सामान्यतः दो समोच्च अवरोधों के मध्य 60 से 70 मीटर की दूरी रखी जाती है जो स्थानीय वर्षामान व ढलान पर निर्भर करती है। समोच्च अवरोध 0.75 से 1 मीटर ऊँचे व 1 से 1.5 मीटर चौड़े आधार के बनाये जा सकते हैं। इन अवरोधों को अधिक मजबूती प्रदान करने के लिये इन पर स्थानीय वनस्पति जैसे मूंजा, सेवण आदि को लगाया जा सकता है।

## सतही पलवार

शुष्क क्षेत्रों में उच्च तापमान के द्वारा तीव्र वाष्पीकरण होता है जिससे मृदा में व्याप्त नमी का तेजी से ह्रास होता है व पौधे नमी के अभाव में सूखने लगते है। अतः संचित नमी को बचाये रखने के लिये खेत से निकाले गये खरपतवार व अन्य घास–फूस से सतह पर की गई पलवार मृदा के वातीय व जलीय क्षरण तथा मृदा नमी को बचाने में काफी सहायक होती है। सतही पलवार से भूमि के तापमान में कमी आती है फलस्वरुप जल वाष्पन कम हो जाता है। सतही पलवार के रुप में उपलब्धता के आधार पर फसलां के अवशिष्ट अंश, पत्तियां, सूखी घासें, लकड़ी का बुरादा या पालिथीन की चादरें काम में ली जा सकती हैं। लगभग 6 टन प्रति हैक्टर की दर से घास की पलवार लगाने से फसलों की उत्पादकता दुगनी की जा सकती है।

## नाडी

नाडी राजस्थान में जल संग्रहण के सबसे प्राचीन और अभी भी प्रचलित वर्षा जल संचयन की एक प्रमुख पद्धति है। नाडी में इकट्ठा किया गया जल पशुओं एवं मानव दोनों के पीने के उपयोग में लाया जाता है। अभी भी ज्यादातर ग्रामीण हिस्सों में पीने के पानी के लिए नाडी का प्रयोग किया जाता है। नाडी के खराब रख–रखाव के चलते वाष्पीकरण और रिसाव (seepage) के तहत पानी का बहुत नुकसान होता है और जैविक हस्तक्षेप और प्रदूषण के चलते नाडी में तेजी से गाद (सिल्ट) का निर्माण होता है और उसकी क्षमता कम होती जाती है। इस समस्या के निराकरण के लिए काजरी जोधपुर ने नाडी के उन्नत प्रारूप का विकास किया है। इसमें जल अधिग्रहण क्षेत्र में पेड़ पौधे लगाना एवं अवसाद को बहाव क्षेत्र से पहले ही रोकना है। इसके अतिरिक्त नाडी में एल.डी.पी.ई. की परत लगा कर जल रिसाव को भी कम किया जा सकता है। वाष्पीकरण को कम करने के लिए छायादार वृक्षों का स्थापन काफी प्रभावशाली होता है।

## टांका

टांका एक छोटे आकार वाला ऊपर से ढका हुआ भूमिगत खड्डा होता है, जिसका प्रयोग मुख्यतः पेयजल आपूर्ति के लिये किया जाता है। परम्परागत तौर पर निजी टांके प्रायः घर के आँगन या चबूतरों में बनाये जाते हैं, जबकि सामुदायिक टांकों का निर्माण पंचायत भूमि में किया जाता है। चूंकि टांके वर्षा–जल संग्रहण के लिये बनाये जाते है इसलिए इनका निर्माण आंगन/चबूतरे या भूमि के प्राकृतिक ढाल की ओर सबसे निचले स्थान में किया जाता है। परम्परागत रुप से टांके का आकार चौकोर, गोल या आयताकार भी हो सकता है। जिस स्थान का वर्षा–जल टांके में एकत्रित किया जाता है उसे पायतान या आगोर कहते है और उसे वर्ष भर साफ रखा जाता है। संग्रहित पानी के रिसाव को रोकने के लिये टांके के अन्दर चुनाई की जाती है। टांके के निर्माण के लिये ऐसे स्थान का चुनाव करना चाहिये जहां वर्षा जल स्वतः इकत्त होता हो व संग्रहण के लिये प्राकृतिक रुप में पर्याप्त आगोर या पायतान मिल सके। साफ, कठोर व एक समान ढाल वाले आगोर से कम जगह में ज्यादा वर्षा जल संग्रहित किया जा सकता है। परम्परागत चौकोर या आयताकार टांकों के स्थान पर गोल, बेलनाकार टांके अधिक मजबूत होते हैं व समान क्षमता के लिये निर्माण में कम सामग्री की आवश्यकता होती है। परिवार के सदस्यों की संख्या, पशुधन व विशिष्ट जल उपयोग जैसे पौधशाला, घरेलू बागवानी इत्यादि के आधार पर टांके की क्षमता का निर्धारण किया जाता है। जलशास्त्राय सिद्धान्त के अनुसार टांके में वर्षा जल संग्रहण स्थानीय वर्षामान, आगोर का क्षेत्रफल व आकार, आगोर की प्रकृति आदि पर निर्भर करता है। टांके की जल संग्रहण क्षमता का निर्धारण निम्न सूत्र द्वारा किया जा सकता है।

**आवश्यकता (लीटर)** = परिवार के सदस्य x 3650 +पशुधन x14600
**टांका क्षमता (लीटर)** = आवश्यकता x1.10

उपरोक्त सूत्र में प्रति व्यक्ति प्रतिदिन का जल खर्च पीने व खाना बनाने की आवश्यकतानुसार 10 लीटर लिया गया है। पशुओं के लिये औसतन 40 लीटर पानी प्रति पशु प्रतिदिन के हिसाब से वार्षिक गणना की गई है। टांके की क्षमता का निर्धारण करने के बाद टांके की गहराई व गोलाई (व्यास) का निर्धारण किया जाता है। सामान्यतः टांके 3 से 4 मीटर गहरे बनाये जाते हैं जो जमीन के अन्दर की मिट्टी की प्रकृति पर निर्भर करते हैं। एक अच्छे एवं टिकाऊ टांके के निर्माण लिए टांके की गहराई एवं गोलाई (व्यास) लगभग बराबर होनी चाहिए। निर्माण कार्य में चूने के स्थान पर सीमेन्ट का प्रयोग करने से टांके की आयु बढ़ जाती है। एक मध्यम सदस्यों (4–6) वाले परिवार की वार्षिक पेयजल की आपूर्ति के लिए 21 हजार लीटर क्षमता वाला टांका पर्याप्त होता है। 21 हजार लीटर क्षमता वाले टांके की गहराई 3.2 मीटर व व्यास 3.0 मीटर होता है। टांको के निर्माण में 1 फुट मोटी सीमेन्ट पत्थर की दीवार व 1 फुट मोटा सीमेन्ट कंकरीट का तला पर्याप्त मजबूती प्रदान कर सकता है। उन्नत टांकों में वर्षा जल के आगमन व अतिरिक्त पानी के निकास के लिये आवक व जावक का प्रावधान होता है। आवक स्थान पर बहाव के साथ आई मिट्टी को रोकने के लिये एक छोटी हौदी (सिल्ट ट्रेप) बनाई जाती है। आवक जावक स्थान पर छोटे अवांछित जानवरों के टांके में प्रवेश पर रोक के लिये उचित आकार की लोहे की जाली लगाई जाती है। आगोर से वर्षा जल को सीधे टांके की बाहरी दीवारों में रिसने से रोकने के लिये टांके के चारों ओर 2 से 2.5 फीट चौड़ी सीमेन्ट कंकरीट की एक कालर बनाई जाती है। रेगिस्तान की औसत वर्षामान व सामान्य आगोर प्रकृति के अनुसार 21 हजार लीटर क्षमता के टांके के भरण के लिये 250 से 300 वर्ग मीटर का आगोर पर्याप्त होता है। टांके के आगोर को साफ, एक समान ढलान वाला व कठोर करके वर्षा जल के बहाव को बढ़ाया जा सकता है। पक्के मकानों या हवेलियों के निकट बने टांको में जमीनी आगोर के साथ–साथ छत्तों का पानी भी पाइपों के द्वारा टांके में डाला जा सकता है। जमीनी आगोर की तुलना में पक्की छत्तों से वर्षा जल का ज्यादा बहाव होता है व संग्रहित पानी में अशुद्धियाँ भी कम होती है। अतः अनुकूल परिस्थितियों में टांका निर्माण करते समय वर्षा जल संग्रहण के लिये छत्तों से वर्षा जल इकट्ठा करने का भी प्रावधान रखना चाहिए। उन्नत टांकों में संग्रहित जल की निकासी के लिये पारम्परिक रस्सी, बाल्टी के स्थान पर हैण्डपम्प लगाया जा सकता है। इससे न केवल जल की बचत होती है अपितु यह जल निकालने का एक सुरक्षित तरीका भी है। एक उन्नत व बहुउद्देश्यीय टांका निर्माण पर लगभग 4–5 रुपये प्रतिलीटर लागत आती है जिसमें संग्रहित जल का उपयोग घरेलू आवश्यकता के बाद आर्थिक रुप से लाभदायक पेड़, पौधों व पौधशाला इत्यादि में भी किया जा सकता है। ठीक प्रकार से बनाये टांको की यदि नियमित देखभाल की जाये तो ये कई पीढ़ियों की प्यास बुझाने के साथ–साथ पर्यावरण संरक्षण व अतिरिक्त आय का स्त्रोत बन सकते हैं।

## परिस्त्रवण टैंक

शुष्क क्षेत्रों में जहॉ वर्षा अल्प होती है, भूजल का पुनर्भरण उपयोग के अनुपात में नहीं हो पाता है। ऐसी स्थिति में परिस्त्रवण टैंक से कृत्रिम भूजल पुनर्भरण द्वारा भूजल की आपूर्ति को दीर्घकालिक आधार पर सुरक्षित किया जा सकता है। परिस्त्रण टैंक अधिकांशतः जमीनी बांध ही होते हैं जिनमें केवल उत्प्लव मार्ग के लिए चिनाई की गई संरचना होती है। परिस्त्रवण टैंक का उद्देश्य भूमिजल भण्डारण में पुरर्भरण करना होता है। ये टैंक पूरी तरह टपकन (परकोलेशन) के माध्यम से भूजल के त्वरित पुनर्भरण के लिए उपयोग में लाये जाते हैं। तालाबों के मुकाबले, परिस्त्रवण टैंक, पानी का पुनर्भरण बेहतर

ढंग से करते हैं क्योंकि इनमें पानी का भराव और पुनर्भरण मुख्यतः मानसून के दौरान होता है, जिस समय वाष्पीकरण की दर गर्मी के मुकाबले लगभग आधी होती है। परिस्त्रवण टैंक का निर्माण ऐसे स्थान पर करना चाहिये जहॉ उपरी मिटटी भुरभुरी हो जिससे जल त्वरित रूप से जमीन में समा सके। परिस्त्रवण टैंक का निर्माण, यथासंभव द्वितीय से तृतीय चरण की जलधारा पर किया जाना चाहिये। परिस्त्रवण टैंक का आकार टैंक तल की परिस्त्रवण क्षमता (परकोलेशन केपेसिटी) के अनुसार निर्धारित किया जाना चाहिए।

## चैक डैम/नाला बंड

चैक डैम/नाला बंड एक ऐसी संरचना है जिसका निर्माण अतिसामान्य ढ़लान वाली छोटी जलधाराओं पर ढाल के विरूद्ध नाले के बहाव को कम करने के लिये किया जाता है। इन संरचनाओं में संचित जल अधिकतर नालों के प्रवाह क्षेत्र में सीमित रहता है तथा इसकी ऊँचाई सामान्यतः 2 मी. से कम होती है व अतिरिक्त जल को संरचना की दीवार के ऊपर से बह कर जाने दिया जाता है। अत्यधिक जल द्वारा गड्ढे न बने कटाव ना हो इसलिए डाउन स्ट्रीम की तरफ जल कुशन बनाए जाते हैं। जलधारा के अधिकांश अपवाह का उपयोग करने के लिए इस तरह के चैक डैम की श्रृंखला का निर्माण किया जा सकता है ताकि क्षेत्रीय पैमाने पर आस पास कुंओं के जल का पुर्नभरण हो सके। एकत्रित जल का उपयोग सिंचाई के साथ–साथ पीने के पानी हेतु किया जाता है। काजरी के अनुसंधान क्षेत्र बेरीगंगा में चट्टानी पथरीले जलग्रहण में चैक डैम/नाला बंड के प्रभाव को समझने के लिये एक अध्ययन किया गया। वर्षा ओर अपवाह निरीक्षण के लिये एक स्वचालित वर्षामापी यन्त्र और तीन अपवाह गेज स्टेशन स्थापित किया गये। पानी के वेग एवं अपवाह बनाए रखने के लिये दो नालों पर कम ऊंचाई के चैक डैम का निर्माण किया गया। वर्षा तीव्रता और पूर्ववर्ती नमी की स्थिति से अपवाह की मात्रा 8–15% के बीच पायी गयी। ब्लॉक आधार पर चैक डैम ने 12.5% अपवाह का संरक्षण किया, जबकि अलग–अलग नालों पर ये 45% पाया गया। चैक डैम के निर्माण के कारण नाले के निचले तरफ गाद की मात्रा में भी कमी पायी गयी।

## गैबियन द्वारा वर्षा जल पुरर्भरण

गैबियन का निर्माण सामान्यतः छोटी जलधाराओं पर जलधाराओं के बहाव को संरक्षित करने के लिए किया जाता है। साथ ही जलधारा के बाहर बिल्कुल भी प्लावन नहीं हो पाता। जलधारा पर छोटे बांध का निर्माण स्थानीय रूप से उपलब्ध शिलाखण्डों (बोल्डर्स) को लोहे के तारों की जालियों में डालकर तथा उसे जलधारा के किनारों पर बांध कर किया जाता है। इस प्रकार की संरचनाओं की ऊँचाई लगभग 1 मीटर से कम होती है व ये साधारणतया 10 मीटर से कम चौड़ाई वाली जलधाराओं में प्रयोग होती है। कुछ जल पुनर्भरण के स्त्रोत में जमा छोड़ कर शेष अधिक जल इस संरचना के ऊपर से बह जाता हैं जलधारा की गाद शिलाखण्डो (बोल्डर्स) के बीच जम जाती है और फिर उसमें वनस्पति के उगने से बांध अपारगम्य बन जाता है और बरसात के अपवहित सतही जल को अधिक समय तक रोक कर भूमिजल में पुनर्भरित होने में मदद करता है।

## पुनर्भरण कुँओं द्वारा वर्षा जल का भूमिजल में पुनर्भरण

चालू व बंद पड़े कुँओं को सफाई व गाद निस्तारण के पश्चात पुनर्भरण संरचना के रूप में प्रयोग में लाया जा सकता हैं। पुनर्भरित किये जाने वाले जल को गाद निस्तारण होदी से एक पाईप के माध्यम से कुँऐं के तल या जल स्तर के नीचे तक ले जाया जाता है ताकि कुँए के तल में गड्ढे होने व जलभृत में हवा के बुलबुलों को फंसने से रोका जा सके। पुरर्भरित जल गाद मुक्त होना चाहिए तथा गाद को हटाने के लिए अपवाहित जल को या तो गाद निस्तारण होदी या फिल्टर होदी से गुजारा जाना चाहिए। जीवाणु संदूषक को नियंत्रित रखने के लिए क्लोरीन आवधिक रूप में डाली जानी चाहिए।

## खडीन

खडीन, राजस्थान के अति शुष्क क्षेत्र में जल संरक्षण और उपयोग का एक अनूठी तकनीक है। यह तकनीक 15वीं शताब्दी में राजस्थान के जैसलमेर जिले के पालीवाल ब्राह्मणों द्वारा विकसित की गई थी। खडीन प्रणाली कृषि क्षेत्र पर वर्षा जल संचयन के सिद्धांत और फसल उत्पादन के लिए इस जल–संतृप्त भूमि के बाद के उपयोग पर आधारित है। इस तकनीक के तहत ढलान के अंतिम छोर पर लगभग 100–200 मीटर लम्बाई का मिटटी का एक बांध बनाया जाता। बांध की ऊचाई स्थानीय वर्षामान, आगोर व ढलान पर निर्भर कराती है। अतिरिक्त पानी के निकास के लिए बांध पर Sluices (कॉपीराईट चिह्न) spillways बनाे; जाते है। ऊपरी सतह एवं चट्टानी तल से वर्षा जल बहाव के साथ–साथ चिकनी मिट्टी निचली सतहों पर इकट्ठी हो जाती है। ऐसे स्थानों पर यदि खेत की निकासी की तरफ मिट्टी के बांध उचित अधिप्लवन मार्ग के साथ बनाये जाए तो इन स्थानों को उपजाऊ खेतों में बदला जा सकता है। खडीन व आगोर में प्रायः 1:10 का अनुपात रखा जाता है। वर्षा कम होने की स्थिति में जल अधिग्रहण क्षेत्र एवं सिंचित क्षेत्र का अनुपात अधिक हो जाता है। खडीन प्रणाली कृषि क्षेत्र पर वर्षा जल संचयन के सिद्धांत और फसल उत्पादन के लिए इस जल–संतृप्त भूमि के बाद के उपयोग पर आधारित है। संस्थान ने बावरली–बम्बोर जलग्रहण परियोजना के तहत 20 हेक्टेयर क्षेत्रफल वाली तीन खडीनों की एक श्रृंखला का विकास किया है। खडीन के निर्माण से पहले, अनियंत्रित बहाव के कारण बीज, उर्वरक और मूल्यवान पानी बिना

इस्तेमाल खेत से बाहर बह जाता था परन्तु खडीन के निर्माण के बाद, किसान उत्कृष्ट खरीफ और रबी फसलों ले पाने में सक्षम हो पाया है। खडीन में एकत्र पानी, भूजल जल के निरंतर पुनर्भरण में सहायता करता है। विभिन्न खडीनों के माध्यम से भूजल पुनर्भरण के अध्ययन से पता चलता है कि खडीनों के माध्यम से एक ही मौसम में संग्रहीत पानी का 11 से 48 प्रतिशत तक भूजल में पुनर्भरण किया जा सकता है साथ ही बलुआ पत्थर और गहरी जलोढ़ में स्थित कुओं में पानी का स्तर क्रमशः 0.8 मीटर और 2.2 मीटर तक बढ़ सकता है।

## फव्वारा एवं बूंद बूंद सिंचाई

सिंचित कृषि के उद्भव के साथ ही खेती में पानी के कुशल प्रबंधन के लिए बहुत सी सिंचाई विधियों का विकास हुआ है। परन्तु शुष्क क्षेत्रों की रेतीले मिट्टी में, सिंचाई के तरीकों को सुधारने के लिए अतिरिक्त ध्यान देने की जरूरत है। कुल जल का लगभग 85% उपयोग सिंचाई के लिए किया जाता है और बाकी 15% पीने, औद्योगिक और अन्य उद्देश्यों के लिए उपयोग किया जाता है। सिंचाई का लगभग 65% एवं पेयजल का 30–40% भाग उचित तकनीक व रखरखाव के अभाव में बिना प्रयोग के नष्ट हो जाता है। सूक्ष्म सिंचाई प्रणाली जैसे फव्वारा एवं बूंद बूंद सिंचाई प्रणाली को अपनाकर सीमित जल की उत्पादकता को बढाया जा सकता है।

फव्वारा तकनीक में पानी छोटी–छोटी बूंदो के रूप बारिश की फुहार की तरह पौधों के उपर गिरता है। फव्वारे के सिस्टम को पंपिंग सेट से जोड़ देते हैं। जब पंपिंग सेट को चलाया जाता है तो पानी तेज बहाव के साथ फुहार की तरह बाहर निकलता है। यह फव्वारा घूमता रहता है, जिससे आस–पास चारों तरफ फसल की सिंचाई होती रहती है। यह तरीका सघन खेती में अच्छा नतीजा देता है। फव्वारा तकनीक से सिंचाई करने से जल का वितरण पूरे खेत में एक समान होता है। इसमें ध्यान रखने की बात ये है कि तेज हवा के दौरान फव्वारे न चलायें तथा पानी का दबाव इस तरह से रखें कि एक नोजल का पानी दूसरे नोजल तक एवं एक लाइन का पानी दूसरी लाइन तक पहुँचे। बूंद बूंद सिंचाई तकनीक में छोटे छेद वाली प्लास्टिक की पाइप लाइनें इस्तेमाल की जाती हैं, जो पौधों की जड़ों के पास बूंद–बूंद कर पानी टपकाती है। इसमें सिंचाई के अलावा खाद और कीटनाशी दवा को भी आसानी से दिया जा सकता है। इस तकनीक से पानी की 70–90% तक की बचत होती है। सिंचाई के काम में 40–60% मेहनत की बचत और फसल पैदावार में 20–30% तक की बढ़ोतरी होती है। इस तकनीक को अपनाने से मिट्टी का कटाव भी नहीं होता और सिंचाई के लिए मेड़ नहीं बनानी पड़ती है।

## उपसंहार

वर्षाजल संचय तकनीक अत्यधिक स्थान विशिष्टतायुक्त होती है, जो कि जलवायु, प्रकृतिक भूगोल एवं सामाजिक–आर्थिक संबंधी कारकों पर निर्भर करती है। राज्य में जल संरक्षण के लिए पारंपरिक ज्ञान "जहाँ बूंद गिरे उसे वहीं समेट लो" और "खेत का पानी खेत में और गाँव का पानी गाँव में" को वृहद पैमाने पर इस्तेमाल में लाना चाहिए और इसके लिए प्रचार–प्रसार भी होना चाहिए। इसके साथ–साथ जल–बचत वाली सिंचाई के उन्नत तरीकों को भी यथासंभव अपनाया जाना चाहिए जिससे कि फसल उत्पादकता में वृद्धि हो सके।